पहली नज़र में यह विचार कि परमेश्वर किसी का उपहास कर सकता है, हमें चौंका सकता है—यहाँ तक कि असहज भी कर सकता है। क्योंकि आम तौर पर हम “उपहास” को क्रूरता, घमण्ड या दूसरों को नीचा दिखाने से जोड़ते हैं। लेकिन जब हम पवित्रशास्त्र को ध्यान से पढ़ते हैं, विशेषकर नीतिवचन 1:26 और भजन 59:8, तो हमें दिखाई देता है कि बाइबल इस प्रकार की भाषा का उपयोग करती है—लगातार और हठीले विद्रोह के प्रति परमेश्वर की प्रतिक्रिया को प्रकट करने के लिए।

आइए पहले इन पदों को देखें:

“मैं भी तुम्हारे विपत्ति के समय हँसूँगा;
जब तुम पर भय आ पड़ेगा तब ठट्ठा करूँगा।”
(नीतिवचन 1:26)

“परन्तु हे यहोवा, तू उन पर हँसता है;
तू सब जातियों को ठट्ठों में उड़ाता है।” (भजन 59:8)

ये पद उन लोगों के संदर्भ में हैं जिन्होंने बार-बार परमेश्वर की बुद्धि, उसकी चेतावनियों और उसके अधिकार को ठुकराया। यहाँ जिस “उपहास” की बात हो रही है, वह तुच्छ या प्रतिशोध से भरा हुआ नहीं है। बल्कि यह उस हठीले विद्रोह के प्रति परमेश्वर की पवित्र प्रतिक्रिया है—जब मनुष्य लगातार अनुग्रह को अस्वीकार करता है, तब उसकी मूर्खता प्रकट हो जाती है।

परमेश्वर का उपहास और मनुष्य का उपहास — अंतर

मनुष्य का उपहास अक्सर घमण्ड, ईर्ष्या, असुरक्षा या द्वेष से उत्पन्न होता है। इसका उद्देश्य दूसरों को नीचा दिखाना और स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध करना होता है। लेकिन शास्त्र में दिखाया गया परमेश्वर का “उपहास” इससे बिल्कुल अलग है।

यह वास्तव में न्यायिक विडम्बना (judicial irony) का एक रूप है—जिसके द्वारा परमेश्वर यह दिखाता है कि उसकी सच्चाई और बुद्धि का विरोध करना कितना व्यर्थ और मूर्खतापूर्ण है। धर्मशास्त्र में इसे मानवीय भावनाओं की भाषा कहा जाता है—अर्थात् परमेश्वर के कार्यों को समझाने के लिए मानवीय शब्दों का प्रयोग।

परमेश्वर का “हँसना” मनुष्य के दुःख में आनंद लेना नहीं है, बल्कि उसकी सच्चाई को ठुकराने की निरर्थकता पर एक धर्मी

प्रतिक्रिया है। जैसा कि प्रेरित पौलुस लिखता है:

“धोखा न खाओ; परमेश्वर ठट्ठों में नहीं उड़ाया जाता,
क्योंकि मनुष्य जो कुछ बोता है, वही काटेगा।”
(गलातियों 6:7)

यह ईश्वरीय न्याय के सिद्धान्त को दर्शाता है—परमेश्वर पहले चेतावनी देता है, मन फिराने का अवसर देता है, और उसके बाद परिणामों को होने देता है।

परमेश्वर का अंतिम उद्देश्य: उद्धार, विनाश नहीं

न्याय के समय भी परमेश्वर का उद्देश्य मनुष्य का विनाश नहीं, बल्कि उसका पश्चाताप और उद्धार है। नीतिवचन 1 के व्यापक संदर्भ को देखें:

“मेरी डाँट पर मन फिराओ;
देखो, मैं अपनी आत्मा तुम पर उँडेलूँगा,
और अपनी बातें तुम्हें जता दूँगा।”

(नीतिवचन 1:23)

यहाँ स्पष्ट है कि न्याय से पहले अनुग्रह की पुकार आती है। परमेश्वर पहले लोगों को लौटने, सुनने और समझने के लिए बुलाता है। जब बार-बार इस बुलाहट को ठुकराया जाता है, तब न्याय की घोषणा होती है।

इसी सच्चाई को हम विलापगीत 3:31–33 में भी देखते हैं:

“क्योंकि प्रभु सदा के लिए त्याग नहीं देता।
चाहे वह दुःख दे, तौभी अपनी बहुतायत करुणा के कारण दया
करेगा।
क्योंकि वह मन से किसी को दुःख नहीं देता,
और न मनुष्यों को क्लेश देता है।”
(विलापगीत 3:31–33)

यह दिखाता है कि परमेश्वर का अनुशासन आनंद से नहीं, बल्कि प्रेम और सुधार की भावना से आता है। उसका न्याय सदैव उसकी दया के साथ जुड़ा रहता है।

इससे हमें क्या सीखना चाहिए?

ये वचन हमें अपने हृदय की जाँच करने के लिए बुलाते हैं। हम परमेश्वर की आवाज़ सुनकर क्या करते हैं?
क्या हम सुधार को ठुकरा देते हैं, या नम्रता से उसकी ओर लौटते हैं?

परमेश्वर किसी का उपहास करना नहीं चाहता—वह उद्धार करना चाहता है। लेकिन यदि कोई लगातार उसे अनदेखा करता रहे, तो उस अस्वीकार के परिणामों का सामना करना पड़ता है।

“आज यदि तुम उसका शब्द सुनो,
तो अपने हृदयों को कठोर न करो…”
(इब्रानियों 3:15)

दया अब भी बोल रही है

परमेश्वर का उपहास अंतिम शब्द नहीं है—उसकी दया अंतिम शब्द है। वही परमेश्वर जो विद्रोह की मूर्खता को प्रकट करता है, पश्चाताप करने वालों को खुले हृदय से स्वीकार भी करता है। यदि

□□ □□□ □□□□ □□□□□ □□□, □□ □□ □□□□ □□□□□, □□□□ □□□□□□ □□ □□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ □□□□

□□□ □□ □□□□□□ □□ □□ □□ □□□□ □□ □□□□ □□, □□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□□□□□ □□□ □□□□ □□— □□ □□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□□□□ □□□ □□□

□□, □□□□□ □□□□! □

JIUNGE NA GROUP LETU LA WHATSAPP HAPA >> WHATSAPP GROUP....

Share on:
WhatsApp